RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-02
Issue-09
September-2017

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

शंकराचार्य के दर्शन में योग की अवधारणा

डॉ0 सीमा सिन्हा

Dept. of Philososhy, Veer kumar Singh University Ara , Bihar

ARTICLE DETAILS

Article History
Received: 05 August 2017
Accepted: 10 Sep 2017
Published Online: 15 Sep 2017

कुंजी शब्द (Key words) :
योग की अवधारणा साधना, चातुष्य जीवनमुक्ति, आधिकारिक निरूपण।

ABSTRACT

इस अनुसंधान के माध्यम से लौकिक एवं पारलौकिक भागों का परित्याग कर किस प्रकार शाम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति एवं तितीक्षा नामांक साधनों के माध्यम से की योग की प्राप्ति हो सकती है। शम का मन के संयम से, दम का अर्थ इन्द्रियों के नियंत्रण से, श्रद्धा का अर्थ शास्त्रों के प्रति निष्ठा भाव से, समाधान का अर्थ शास्त्रों के प्रति निष्ठा भाव से, समाधान का अर्थ चित् को ज्ञान के साधन में लगाने से, उपरति का अर्थ कार्यो से विरक्त करने से, तितिक्षा का अर्थ उष्ण और शीत आदि इन्द्रियों को सहन करने से है। योग साधना के द्वारा मानवीय ज्ञान के समस्त ज्ञात अज्ञात साधनों का विकास करके परमतत्व परम सत्य आत्म प्रभा की अपरोक्षानुभूति प्राप्त की जाती है।

Introduction

महान दार्शन शंकराचार्य अलौकिक प्रतिभा चरित्र बल पर तत्वज्ञान और लोक कल्याण के लिए छोटी सी उम्र मं देश के प्रति समर्पण करने वाले महान ज्ञानी थे। इनका मानना था कि योग साधना के द्वारा मानव विज्ञान के समस्त ज्ञात और अज्ञात साधनों का विकास करके परमतत्व परमसत्य आत्म ब्रह्मा की अपरोक्षानुभूति प्राप्त की जाती है। यही व्यवहारिक जीवन में मानव का समस्त समस्याओं का समाधान रूप मोक्ष है। दर्शन की व्यवहारिक धरातल पर उपलब्ध एवं पूर्णता का प्रयास है। जिस प्रकार विज्ञान में भौतिक प्रयोगशाला में किये गये प्रयोगों द्वारा परिणाम की प्राप्ति की जाती है उसी प्रकार शंकर के दर्शन में शरीर के अंदर की प्रयोगशाला में योग साधना द्वारा मानवीय ज्ञान के समस्त ज्ञात अज्ञात साधनों का विकास करके परमतत्व परम आत्मब्रह्म की अपरोक्षानुभूति प्राप्त की जाती है। यही व्यवहारिक जीवन में मानव की समस्त समस्याओं का समाधान रूप मोक्ष है। यही शंकर के दर्शन की सर्वोच्च अवस्था है। दर्शन की व्यवहारिक धरातल पर उपलब्धि एवं पूर्णता प्राप्ति का यह प्रयास यहॉ योग साधना कहा गया है।

Objective and Methodology

शंकर के दर्शन में सर्वत्र कर्मकाण्ड का खण्डन एवं ज्ञानकाण्ड की स्थापना देखने को मिलती है उनके अनुसार जिस प्रकार अंधकार के द्वारा अंधकार का नाश नहीं हो सकता उसी प्रकार कर्म (अविद्या)के द्वारा अज्ञान (अविद्या) को दूर नहीं किया जा सकता। मोक्ष की प्राप्ति ज्ञान से ही होती है कर्म से नहीं शंकर ने कर्म का खण्डन कई प्रकार से किया है।

श्रुति भी कहती है कि जिस प्रकार यह कर्मोपार्जित लोक क्षीण होता है उसी प्रकार पुण्यार्जित परलोक भी क्षीण हो जाती है। कर्म से प्राप्त होने वाले लोकअनित्य तथा ज्ञानफल मोक्ष नित्य है। शंकर कहते हैं कि जिस प्रकार रज्जु में सर्पभ्रम होने पर भयग्रस्त मनुष्य का भय दूर करने के लिए सर्प निर्वत्ति हेतु लाठी आदि की अपेक्षा नहीं है किंतु केवल मिथ्या भ्रम को दूर करके यथार्थ रज्जू के ज्ञान की आवश्यकता है। उसी प्रकार ब्रह्म में जगतरूपी अध्यास की निवृत्ति हेतु किसी कर्म की अपेक्षा ना होकर इस मिथ्या ज्ञान निवर्तक की आवश्यकता है।

उपर्युक्त आधार पर हम पाते हैं कि शंकर ज्ञान प्राप्ति में चित्त शुद्धि को अनिवार्य मानते हैं। चित्शुद्ध ज्ञान का साक्षात कारण ना होकर उपाय रूप है। वह ज्ञान का अनिवार्य सहायक साधन है। शंकर ने तो मात्र यह दिखाया है कि मोक्ष की प्राप्ति ज्ञान से होती है। मात्र कर्म से नहीं। शंकर दर्शन कर्म का विरोधी नहीं अपितु महान कर्म के लिए दिव्य प्रेरणा व सामर्थ्य देने वाला दर्शन है। इसका यह स्वरूप इसके योग साधाना में दृष्टिगोचर होता है।

योग की अवधारणा

भारत में सभी आध्यात्मिक दर्शनों का लक्ष्य दुखों से आत्यंतिक निवृत्ति तथा कर्म परंपरा के परिणाम जन्म–मृत्यु के चक्र से छुटकारा पाकर आनंद स्वरूप अवस्था में स्थिति रूप मोक्ष है। यह जिन सहकारी या मुख्य साधनों की उपेक्षा रखता है उसकी साधना प्रक्रिया ही योग है। वस्तुतः अध्यात्मिक दर्शनों की दार्शनिक पद्धति योग ही है। यही शंकराचार्य की दार्शनिक पद्धति एवं साधना पद्धति है। उपनिषद तथा वेदान्त में योग का अर्थ है। अज्ञान की अल्प जीव अवस्था से ज्ञान की पूर्ण व ब्रह्म अवस्था में नित्य स्थिति प्राप्त करना।

योगसूत्र चित वृत्तियों के निरोध को योग कहा गया है। इतर अवस्था में द्रष्टा वृत्तियों की सारूप्यतातदाकारता में रता है। ''शंकर के अनुसार ही ब्रह्मकार वृत्ति भी सभी वृत्तियों का निरोध करके स्वयं नष्ट हो जाती है। यह वही अवस्था है

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

जिसे पतंजलि निबीज अवस्था कहते हैं। शंकराचार्य ने जिस योग साधना पद्धति का अवलोकन किया है उसे वह 'राजयोग' के नाम से पुकारते हैं। वह योग्य की अन्य सभी विधियों को तिरस्कृत ना करके अधिकारी भेद से उन सभी को न्यूनाधिक उपयोगी मानते हैं वे पूजा–पाठ, प्रार्थना, स्रोत, भक्ति वर्णाश्रमधर्म का पालन तथा हठयोग में वर्णित सभी योग साधना के सहकारी साधनों के रूप में मानते हैं। वह केवल मोक्ष अद्वैत स्वरूप के बाबत ही कोई समझौता नहीं करते हैं। शंकराचार्य ने जो भी के 15 अंगों का वर्णन किया है तथा अन्य योग पद्धतियॉ (हठयोग) की उपादेयता को भी स्वीकार किया है।

जिनकी वासनायें कुछ कम क्षीण हुई है उन्हें हम हठयोग से सहित और जिनका चित परिपक्व (वासनाहीन) होता है उन्हें अकेला ही सिद्धि देने वाला होता है।

आधिकारिक निरूपणः–

वेदांत साधना में साधन चतुष्टय से सम्पन्न साधक की साधना की अधिकारी हैं क्योंकि सिद्ध अधिकारी को ही ेती है आनाअधिकारी को नहीं।

साधन चतुष्टय–यह साधन चतुष्टय निम्न है जिसमें ब्रह्माजिज्ञासा होती है।

1. **विवेक–**

नित्यानित्य वस्तुविवेक ही यहां विवेक कहा गया है। ब्रह्म सत्य है और जगत मिथ (अनित्य) है ऐसा दृढ निश्चय है वही नित्यानित्य वस्तु विवेक कहलाता है।

2. **वैराग्य–**

सम्पूर्ण लौकिक एवं परलौकिक भोग्य अंततः दुख की प्राप्ति ही कराते हैं यह भली भांति समझ कर ''ब्रह्म से लेकर स्थावर पर्यन्त समस्त विषयों में जो काकविष्ठा के समान वैराग्य होता है। वही निर्मल वैराग्य है।

3. **षट् संपत्ति–**

शम, दम, तितिक्षा उपराति, श्रम समाधान ये षट् शब्द संपत्तियां है। बारम्बार दोषदृष्टि करने से विशेष समूह से विरक्त होकर वासनाओं का सदा त्याग करके चितकार अपने लक्ष्य में स्थिर हो जाना ही शम कहलाता है। कमेन्द्रियां और ज्ञानेन्द्रियों को उनके लक्ष्य विषयों से खींच कर अपने गोलको में स्थिर करना दम कहलाता है। द्वन्दो को बिना प्रतिरोध किये सहना वितीक्षा है, वृत्ति का बहाय विषयों का आश्रय ना लेना उपराति कहलाती है। शास्त्रों में श्रद्धा वसत्यत्व बुद्धि रखना श्रद्धा तथा चित्तवृत्ति को अपने लक्ष्य ब्रह्म में स्थिर रखना समाधान है।

4. **मुमुक्षुत्व–**

अहंकार से लेकर वे पर्यन्त जितने अज्ञान कल्पित बंधन है उनको अपने स्वरूप के ज्ञान द्वारा त्यागने की इच्छा ही मुमुक्षुत्व है।

श्रवण मनन वह निदिद्यासन–

आत्मा वे ब्रह्म संबंधी उपदेशों को सुनन श्रवण कहलाता है फिर बार बार तर्क व विचार पूर्वक उसका मनन और शोधन करना मनन कहलाता है। फिर मनन के द्वारा निश्चय की गई वस्तु ब्रह्मा आत्मा में मन को भली भांति एकाग्र रखने का अभ्यास निदिद्यासन है। यह निदिद्यासन ही विशेष प्रकार से योग कहलाता है। निदिद्यासन के 15 अंग –भगवान बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के लिए अष्टांग योग का प्रतिपादन किया था। महर्षि पतंजलि ने भी अष्टांग योग का वर्णन योग सूत्र में किया है वे है यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि। शंकराचार्य ने अपने योग साधना में निदिद्यासन के 15 अंगों का वर्णन किया है। वे इस प्रकार है। यम, नियम, त्याग मौन, देश काल, आसन मूलबंध की समता, नेत्रों की स्थिति प्रणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि।

उपर्युक्त प्रकार से योग का अभ्यास करना चाहिए जब तक कि चित्त को लगाने पर एक क्षण में ही वह भ्रम में समाहित ना होने लगे। फिर वह योगी संसाधनों से छूटकर सिद्ध हो जाता है वही उसका स्वरूप है। योगी पुरूष चित्त की शांति इंद्रिय निग्रह विषयें में उपराति और क्षमा से युक्त समाधि का निरंतर अभ्यास करता सर्वात्मभाव का अनुभव करता है। कहा गया है कि वाणी को मन में लय करो, मन को बुद्धिमें और बुद्धि को साक्षी आत्मा में तथा बुद्धि को साक्षी (कूटस्थ) को निर्विकल्प पूर्णब्रह्म में लय करके परमशांति का अनुभव करो। जिस प्रकार समुद्र में मिल जाने से नदी का प्रभाव समुद्र रूप हो जाता है। वैसे ही दूसरों के द्वारा आत्मस्वरूप प्रतीत होने से जिसके चित्त में किसी प्रकार क्षोभ उत्पन्न नहीं होता वह यति जीवन मुक्ति है।

उपसंहार–

भारतीय अध्यात्म में योग की अनेक पद्धतियॉ विकसित हुइ है, बौद्ध दर्शन तथा जैन दर्शन इन अवैदिक दर्शनों की साधना प्रणाली को भी योगी ही है। शंकराचार्य सभी प्रकार की योगियों को परमलक्ष्य की प्राप्ति में निर्णायक रूप से सहायक मानते हैं। शंकर खुद अपने योग का राजयोग कहते हुए यह निर्देश देते हैं कि जिनकी वासनाएं क्षीण है। उन्हें वह (राजयोग) हठयोग के सहित करना चाहिए। किसी भी योग साधना की पद्धति से उन्हें विरोध नहीं विरोध मात्र उन सैद्धान्तिक मान्यताओं से है। जहां वह जरा भी अद्वैतवाद को इधर–उधर झुकाती नजर आती है। उपनिषद् में बताई गई सभी साधन पद्धतियां उन्हें पूर्ण रूप से मान्य है। कुल मिलाकर शंकर के योग की अवधारणा विभिन्न योग विधियों का अच्छा समन्वय है जिसका अध्ययन करके साधक दिग्भ्रमित नहीं होता है।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

निष्कर्ष–

शंकर के योग की अवधारणा विभिन्न योग विधियों का अच्छा समन्वय है। जिसका अध्ययन करके साधक दिग्भ्रमित नहीं होता है बल्कि और सचेत ढग से अध्यात्मिक विकास का निरीक्षण करते समर्थ से युक्त होकर अधिकारिक व सहायता से अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ जाता है।

संदर्भ–

1. भारतीय दर्शन देवराज पृ0सं0–510
2. उपनिषद शंकर भाष्य वाली एक अनुवाद की–11
3. छादोग्य उपनिषद 8/1/6
4. मंडक उपनिषद 2/28
5. शंकराचार्य के दर्शन में योग की अवधारणा दार्शनिक त्रैमासिक जनवरी 1996

© RRIJM 2015, All Rights Reserved